

जौ की चारे की किस्मों का विकास: दशा एवं दिशा

संतोष कुमार बिश्नोई¹ एवं मधु पटियाल²

¹भा. कृ. अनु.प.- भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसन्धान संस्थान, करनाल

²भा. कृ. अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र शिमला

धान, गेहूँ और मक्का के बाद, जौ (*Hordeum vulgare* L.) भारत की एक महत्वपूर्ण रबी फसल है जिसे खाद्यान्न, माल्टिंग, पशु-आहार अथवा पशु-चारे के लिए उगाया जाता है। विश्व के कुल जौ उत्पादन का लगभग 75% भाग पशु-आहार (अनाज) के रूप में प्रयोग में लाया जाता है जबकि लगभग 20% भाग अल्कोहलिक पेय पदार्थ जैसे की बियर या शराब बनाने और केवल 5% के लगभग मानव खाद्यान्न के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। जौ विश्व की सर्वाधिक जलवायु-सहिष्णु फसलों में से एक है और यह कम उपजाऊ मृदा तथा कम सिंचित क्षेत्रों आदि में भी आसानी से उगाई जा सकती है। भारत के उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में जब नवम्बर से जनवरी महीनों में हरे चारे की कमी हो जाती है तब पशु-चारे के लिए भी यह एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण फसल है। चारा जौ सबसे महत्वपूर्ण फसल प्रजातियों में से एक है जो आमतौर पर सीमांत वातावरण जैसे की सूखाग्रस्त, अन्त्यः ताप अथवा ठण्ड प्रभावित जलवायु और मृदालवणता ग्रसित आदि परिस्थितियों के अनुकूल है। विशेषकर जब सूखे या पाले के कारण जौ की अनाज की फसल क्षतिग्रस्त हो गई हो

तब जौ का चारे के रूप में व्यापक उपयोग किया जा सकता है। हालांकि कई छोटी अनाज फसलें उच्च गुणवत्ता वाले चारा का स्रोत प्रदान करती हैं, लेकिन जौ समय से बुवाई की स्थिति में तेजी से विकास करने के कारण हरे चारे के लिए एक उत्तम विकल्प प्रदान करता है।

घास परिवार से संबंधित जौ एकवर्षीय गुच्छेदार घास है जिसकी लम्बाई 50 से 120 से.मी. तक हो सकती है। चारा जौ की पत्तियाँ आम तौर पर 25 से.मी. तक लम्बी होती हैं और तने के साथ विपरीत दिशाओं में व्यवस्थित होती हैं। जौ की पत्तियाँ अन्य अनाजों की फसल जैसे की गेहूँ आदि की तुलना में अधिक चौड़ी होती हैं और इसका पत्तियाँ : तना अनुपात लगभग 0.88 होता है जो की उच्च चारा उत्पादन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। बायोमास उपज और डेयरी गाय के दूध उत्पादन को अनुकूलित करने के लिए जौ काटने का समय बहुत ही महत्वपूर्ण है। जौ का उपयोग अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में दोहरे उद्देश्यों (Dual purpose barley) के लिए भी किया जाता है जिसमें मैदानी क्षेत्रों में बुवाई के 50 से 55 दिनों के बाद और पहाड़ी क्षेत्रों में 70 से 75 दिनों में पहली कटाई

करके हरा चारा प्राप्त कर लिया जाता है और उसके बाद पौधों के विकास से अनाज और पुआल भी प्राप्त कर लिया जाता है। जौ को हरे चारे के अतिरिक्त पुआल के रूप में भी पशु चारे के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है।

सामान्य तौर पर, जौ की किस्मों को अलग-अलग तरीकों से वर्गीकृत किया जाता है। इनमें से मुख्यतः 2-पंक्ति और 6-पंक्ति, छिलका रहित और छिलका सहित, अयन (awn) की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति, बालियों की सघनता, फसल का मौसम (शीत अथवा बसंत जौ) तथा दानों के रंग के आधार पर जिनमें से मुख्यतः काला, बैंगनी, या फिर सफेद रंग होता है, के आधार पर किया जाता है।

20वीं शताब्दी के अंत में चारा उत्पादन में स्थिरता बढ़ाने के लिए चारा जौ की किस्मों को विकसित करने के कई प्रयास हुए। इन प्रयासों में किस्मों का चयन पूरी तरह से उपज और अन्य महत्वपूर्ण कृषि संबंधी विशेषताओं पर केंद्रित था। आम तौर पर चारा या साइलेज के लिए इस्तेमाल की जाने वाली जौ की किस्में, परिपक्व अयन की उपस्थिति के कारण मवेशियों के मुंह में जलन पैदा करती हैं लेकिन अगर हेडिंग (अयन के बनने से पहले) से पहले या फूल आने के तुरंत बाद जौ की फसल को काट लिया जाए तो अयन किस्मों का उपयोग साइलेज के लिए किया जा सकता है। दुग्ध-

उत्पादन के लिए चारा के पौष्टिक मूल्य को अधिकतम करने के लिए साइलेज की कटाई का सबसे अच्छा समय मध्य-बूट और मध्य-आटा के बीच है। सम्पूर्ण जौ के पौधे का साइलेज उच्च रेशा-युक्त किन्तु प्रोटीन में कम होता है जो की जुगाली करने वालों पशुओं के लिए एक आदर्श चारा है। चारा जौ के रूप में दो-पंक्तियों और अयन विहीन किस्मों को स्वास्थ्यवर्धक और अधिक पोषण गुणवत्ता वाला माना गया है। उच्च अक्षांशों पर कम तापमान और दिन की तुलनात्मक लंबाई का प्रभाव देर से कटाई करने में सहायक सिद्ध होता है तथा कम सेल लिग्निफिकेशन के कारण बायोमास का उत्पादन बढ़ जाता है और परिणामस्वरूप चारे की गुणवत्ता बढ़ जाती है। सर्वोत्तम गुणवत्ता वाले चारा और तेजी से पुनर्विकास के लिए फसल को 30-40 सेमी की ऊंचाई पर काटा जाना चाहिए। उच्च गुणवत्ता वाले पुनर्विकास को सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक कट के बाद फसल को उर्वरक दिया जाना चाहिए। अयन के गठन से पहले कटाई पूर्ण कर लेनी चाहिए। एक आदर्श चारा जौ किस्म में शुष्क पदार्थ की उच्च सुपाच्य, कम एसिड डिटर्जेंट फाइबर (एडीएफ) और उच्च कच्चे प्रोटीन (सीपी) सामग्री होनी चाहिए। फसल के फूल और आटा चरण के बीच, चारा जौ में प्रोटीन और तटस्थ डिटर्जेंट फाइबर (एनडीएफ) की सामग्री काफी भिन्न होती है, प्रोटीन सामग्री के लिए 12 से 9% शुष्क पदार्थ (डीएम) और

एनडीएफ (आईएनआरए) के लिए 63 से 56% डीएम से घट जाती है। प्रोटीन और एनडीएफ में गिरावट ज्यादातर मध्य-आटा स्तर पर स्टार्च में 20% की वृद्धि के कारण है।

चारा जौ की किस्में

पारंपरिक प्रजनन विधियों का उपयोग करते हुए वैश्विक स्तर पर जौ प्रजनकों द्वारा चारा गुणवत्ता के लिए दो-पंक्ति और छह-पंक्ति दोनों प्रकार की कई किस्मों का प्रजनन किया गया है। जौ की दो-पंक्ति किस्मों में बुस्बी, सीडीसी ऑस्टेन्सन, सीडीसी काउबॉय, सीडीसी

कोयलिशन, सीडीसी मावेरिक, कॉनलन, गडस्बी, पोनोका, सीबे और ज़ेना शामिल हैं। जौ की छह-पंक्ति वाली किस्में एसी रेंजर, चिगवेल, मस्कवा, सुन्दरे, ट्रोचू और विवर हैं। भारत में भी, कई शोध संस्थानों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के द्वारा चारा अथवा दोहरे प्रयोग की कई किस्में विकसित की गई हैं, जिनमें से कुछ को उनकी विशेषताओं (तालिका 1) के साथ यहां सूचीबद्ध किया गया है।

किस्म	विशेषता
रत्ना	इसे भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया है और पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल के वर्षा सिंचित क्षेत्रों के लिए अनुसंशित किया गया है। यह लवणीय, क्षारीय मृदा के प्रति अत्यधिक सहिष्णु हैं। यह किस्म बुवाई के 65 दिनों के बाद लगभग 150 क्विंटल/हेक्टेयर हरा चारा का उत्पादन देती है। इसमें कल्लों की संख्या अधिक होती है तथा 125 से 130 दिनों में पक जाती है।
आजाद (K125)	यह किस्म चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर द्वारा विकसित की गयी है और पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल के क्षेत्रों में खेती के लिए उपयुक्त है। यह सिंचित परिस्थितियों के लिए उपयुक्त दोहरे उद्देश्य वाली किस्म है जो की पीले रतुआ रोग के लिए प्रतिरोधी है और यह लगभग बुवाई के 65 दिन के बाद 150 क्विंटल/हेक्टेयर हरा चारा पैदा करती है और 115-120 दिनों में पक जाती है।
विजया	यह किस्म भी चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा विकसित की गयी है और पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली और मध्य प्रदेश के वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए इसे जारी किया गया है। यह 120-125 दिनों में पक जाती है। यह हरियाणा और पंजाब के वर्षा क्षेत्रों में भी अच्छा प्रदर्शन करती है। इसकी प्रति हेक्टेयर 30-35 क्विंटल अनाज की उपज क्षमता है।



अम्बर	यह किस्म भी चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा विकसित की गयी है और पूर्वी उत्तर प्रदेश के वर्षा आधारित क्षेत्रों में लगाने के लिए उपयुक्त है। यह 130-133 दिनों में पक जाती है। पौधे 100-125 सेमी लम्बाई के होते हैं। इसकी बाली की लम्बाई 8.5-9.5 सेमी होती है। इसमें प्रति हेक्टेयर 25-30 क्विंटल अनाज उत्पादन की क्षमता है।
आर.एस.-6	यह राजस्थान में विकसित किया गया है और वर्षा आधारित और सिंचित दोनों स्थितियों में खेती के लिए उपयुक्त है और मध्य और पूर्वी राजस्थान के लिए अनुशंसित है। यह 130-135 दिनों में पक जाती है और प्रति हेक्टेयर 35 से 40 क्विंटल अनाज की उपज की क्षमता रखती है।
ज्योति	इसे सीएसएयूएटी, कानपुर द्वारा विकसित किया गया है। यह छह-पंक्ति वाली पतवार वाली किस्म है, जो हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, उत्तर-पश्चिमी राजस्थान, बिहार और पश्चिम बंगाल के सिंचित क्षेत्रों में उगाने के लिए उपयुक्त है। पौधे की ऊंचाई कम होती है। इसकी प्रति हेक्टेयर लगभग 35-40 क्विंटल अनाज की उपज क्षमता है। सिंचित परिस्थितियों में यह 120-125 दिनों में पक जाती है, प्रति हेक्टेयर 20-25 क्विंटल अनाज देती है।
किलपर	यह लगभग 135-140 दिनों में पक जाती है। यह पीले रतुए के लिए अतिसंवेदनशील है। अच्छे प्रबंधन के तहत इसकी प्रति हेक्टेयर 28-30 क्विंटल अनाज की उपज क्षमता है। यह ऑस्ट्रेलिया से आयातित किस्म है।
पी.एल.- 56	यह छह पंक्तियों वाली किस्म है जिसमें चौड़ी और अपेक्षाकृत सीधी पत्तियाँ होती हैं और पत्तों का रंग कम हरा होता है। इसकी बालियाँ मोती और सघन होती हैं। किन्तु इसके अयन कांटेदार होते हैं। पंजाब में बारानी परिस्थितियों में इसकी खेती के लिए सिफारिश की जाती है। इसकी प्रति हेक्टेयर 30 क्विंटल अनाज की उपज क्षमता है।
रणजीत (डी.एल.- 70)	यह छह पंक्तियों वाली और भारी जुताई वाली किस्म है, जो केवल पंजाब में व्यावसायिक खेती के लिए अनुशंसित है और सिंचित परिस्थितियों में उगाने के लिए उपयुक्त है। इसकी प्रति हेक्टेयर 30-35 क्विंटल अनाज की उपज क्षमता है। इसकी जल्दी परिपक्वता के कारण, यह आलू, कपास या धान जैसी फसलों की कटाई के बाद बुवाई के लिए देर से कई फसल चक्रों में अच्छी तरह से फिट बैठता है।
करण-201	अखिल भारतीय समन्वित जौ सुधार परियोजना के तहत किस्मों करण 201,

करण-231	231 और 264 को विकसित किया गया है। ये अधिक उपज देने वाली किस्में हैं और चपाती बनाने के लिए अच्छी हैं। ये सभी भूसी रहित किस्में हैं। ये किस्में मल्टीपल और रिले क्रॉपिंग सिस्टम में अच्छी तरह से फिट होती हैं। इन्हें समस्या वाली मिट्टी में भी उगाया जा सकता है, जैसे सूखी भूमि, क्षारीय और लवणीय मिट्टी, आदि। धान की फसल लेने के बाद परती पड़ी भूमि पर भी इन्हें उगाया जा सकता है। ये मध्य प्रदेश के पूर्वी और बृंदेलखंड क्षेत्र, राजस्थान और गुड़गांव और हरियाणा के मोहिंदरगढ़ जिले में खेती के लिए उपयुक्त हैं। करण 201, 231 और 264 की औसत उपज क्रमशः 38, 42.5 और 46 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।
करण-264	
सी-164	यह एक लंबी, छह-पंक्ति वाली किस्म है। इसकी बालियाँ छोटी तथा दाना मोटा, चमकीला और एम्बर होता है। यह पीले रतुए के लिए प्रतिरोधी है। इसमें कठोर भूसा होता है और इसलिए, सिंचित परिस्थितियों में खेती के लिए अधिक उपयुक्त है। इसकी प्रति हेक्टेयर 30-32 क्विंटल अनाज उपज की क्षमता है।
कैलाश	यह हिमाचल प्रदेश की पहाड़ियों के मध्यम से कम ऊंचाई वाले वर्षा सिंचित क्षेत्रों में उगाने के लिए उपयुक्त छह-पंक्ति वाली पतवार वाली किस्म है। यह 145-150 दिनों में पक जाती है। यह पीले रतुए के लिए प्रतिरोधी है। इसमें प्रति हेक्टेयर लगभग 40 क्विंटल अनाज पैदा करने की क्षमता है।
डोलमा	डोलमा किस्म हिमाचल प्रदेश और उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों के मध्यम से उच्च ऊंचाई वाले वर्षा सिंचित क्षेत्रों में उगाने के लिए उपयुक्त है। यह लगभग 140-150 दिनों में पक जाती है। यह पीले रतुए के लिए काफी प्रतिरोधी है। इसकी उपज क्षमता 35-40 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।
हिमानी	हिमानी किस्म शिमला में विकसित की गई थी। यह उत्तर प्रदेश और हिमाचल प्रदेश की मध्यम से निचली पहाड़ी-घाटी में उगने के लिए उपयुक्त है। यह कैलाश किस्म से लगभग एक सप्ताह पहले पक जाती है। इसमें प्रति हेक्टेयर 32-36 क्विंटल अनाज की उपज क्षमता है।
एल.एस.बी.-2	एल.एस.बी.-2 छह-पंक्ति छिलका रहित प्रकार की जौ की किस्म है जो हिमाचल प्रदेश और उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों में कृषि हेतु उपयुक्त है। यह 145-150 दिनों में पक जाती है। इसकी प्रति हेक्टेयर 25-30 क्विंटल अनाज उत्पादन क्षमता है।
आर.डी.बी.-	आर.डी.बी.-1 को उत्परिवर्तन प्रजनन के द्वारा विकसित किया गया है। यह



1	राजस्थान में सिंचित परिस्थितियों में उगाने के लिए उपयुक्त है। यह पीले रतुए के लिए अतिसंवेदनशील है और राजस्थान के रतुआ मुक्त क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसकी प्रति हेक्टेयर 30-35 क्विंटल अनाज की उपज क्षमता है।
बी.जी.-25	इसे हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित किया गया है। यह हरियाणा में सामान्य बुवाई की स्थिति के लिए उपयुक्त है। यह पीले रतुए के लिए प्रतिरोधी है। यह लगभग 120-130 दिनों में पक जाती है। इसमें प्रति हेक्टेयर लगभग 30 क्विंटल अनाज पैदा करने की क्षमता है।
बी.जी.-108	इसे हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित किया गया है। यह देर से बोई जाने वाली परिस्थितियों में व्यावसायिक खेती के लिए उपयुक्त है। इसे परिपक्व होने में लगभग 120-125 दिन लगते हैं। यह पीले रतुए के लिए प्रतिरोधी है। देर से बुवाई की स्थिति में इसकी उपज क्षमता 20-25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।
केदार	इसे भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया है। यह देर से बोई जाने वाली स्थितियों के लिए उपयुक्त है। यह एक बौनी किस्म है जिसमें कल्लों की संख्या अधिक होती है और यह पीले रतुआ और कीटों के प्रति प्रतिरोधी होती है।
नीलम	इसे भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया है। यह किस्म प्रति हेक्टेयर 50 क्विंटल तक उपज देती है। इसके दाने छिलके वाले और एम्बर रंग के होते हैं। यह पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और बिहार की सिंचित और बारानी दोनों स्थितियों में खेती के लिए अनुशंसित है। इस किस्म में प्रोटीन और लाइसिन की मात्रा अधिक होती है।